भारतीय वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान पत्रिका
वर्ष 28 अंक (2) दिसम्बर 2020 पृ. 166-172

भारत में जल प्रबंधन की संभावनाएँ और चुनौतियाँ : एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण

मनोहर अरोड़ा
राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुड़की 247 667 (उत्तराखण्ड)

सारांश : पूरे भू-गर्भीय युग में भारत एक जल कुशल देश रहा है। लेकिन पिछले कुछ दशकों के दौरान देश के कई हिस्सों में पानी की कमी के कारण अभूतपूर्व घटनाएँ हुई हैं। सामाजिक-आर्थिक प्रक्रियाओं में बदलाव और जनसंख्या में वृद्धि के कारण पिछले कुछ दशकों में भारत में पानी की मांग बढ़ रही है। भू-जल संसाधनों का अत्यधिक दोहन हो रहा है, जिससे जल स्तर गिरता जा रहा है और भूजल की गुणवत्ता खराब हुई है। गाद जमा होने के कारण जलाशयों की क्षमता तेजी से घट रही है। औद्योगिक अपशिष्टों और नगरपालिका के कचरे से प्रदूषण के कारण ताजे पानी की आपूर्ति बाधित हो रही है। बढ़ती आबादी के कारण पानी की कमी से पारिस्थितिकी तंत्र की सुरक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा को बनाए रखने के लिए आवश्यक खाद्य पदार्थों के उत्पादन में बाधा आ रही है। भारत के जल संसाधनों के सतत, न्याय संगत और कुशल प्रबंधन को विकसित करने में कई चुनौतियाँ हैं। सबसे पहले, विभिन्न क्षेत्रों में पानी की मांग, प्रकृति और गुणवत्ता निर्धारित करने के लिए पर्याप्त वैज्ञानिक आंकड़ों की अनुपलब्धता के कारण स्थायी जल प्रबंधन रणनीतियों को विकसित करने में बाधा आ रही है। प्रौद्योगिकी चुनौतियां एक और विषय है। तकनीकी और आर्थिक रूप से व्यवहार्य, पर्यावरण और पारिस्थितिक रूप से समर्थ और जल प्रबंधन में सामाजिक रूप से स्वीकार्य समाधान विकसित करने वाली जल प्रौद्योगिकी की पर्याप्त उन्नति नहीं हो रही है। जल क्षेत्र में मौजूदा संस्थान तकनीकी रूप से उन्मुख, क्षेत्रीय और केंद्रीकृत हैं जिनका प्रमुख उद्देश्य मांग की आपूर्ति करना है। वे सामाजिक समस्याओं को हल करने के लिए अलग-अलग दृष्टिकोण को अपनाते हैं और उनमें क्षेत्रीय जल समस्याओं को हल करने और प्रदूषण को नियंत्रित करने की क्षमताओं का अभाव है। संस्थायें, संस्थागत क्षमताओं की कमी और खराब संगठनात्मक समन्वय के कारण, विभिन्न हितधारकों की परस्पर विरोधी जरूरतों को पूरा करने में विफल रहती हैं। इस शोधपत्र में भारत में पानी की समस्याओं, चुनौतियों, उभरते मुद्दों और प्रबंधन का विश्लेषण किया गया है।

Prospects and challenges of water management in India: A scientific approach

Manohar Arora
National Institute of Hydrology, Roorkee 247 667 (Uttarakhand)

Abstract

India has been a water efficient country in the entire geological age. But in the last few decades unprecedented incidents have taken place due to lack of water in many parts of the country. Due to changes in socio-economic processes and population growth, demand for water in India is increasing in the last few decades. Groundwater resources are being highly exploited, due to which water level is declining and quality of ground water has gone down. Due to the accumulation of silt, the capacity of the reservoirs is decreasing rapidly. Due to pollution from industrial wastes and municipal waste, fresh water supply is being interrupted. Due to the growing population due to lack of water, the production of essential food items is being hampered to maintain ecosystem safety, health and social security. There are many challenges in developing sustainable, equitable and efficient management of India's water resources. Firstly, due to the unavailability of adequate scientific data to determine the demand, nature and quality of water in different areas, there is hindrance to developing sustainable water management strategies. Technology challenges are another topic. There is not enough progress in the technological and economically viable, environmentally and ecologically competent and water technology that develops socially acceptable solutions in water management. The existing institutions in the water sector are technically oriented, regional and centralized, whose main purpose is to supply demand. They adopt different perspectives to solve social problems and lack the capabilities of solving regional water problems and controlling pollution. Due to lack of institutional capabilities and poor organizational co-ordination, institutions fail to meet the conflicting needs of different stakeholders. In this research paper, water problems, challenges, emerging issues and management have been analyzed in India.

प्रस्तावना

जल मानव अस्तित्व के लिए एक प्रमुख प्राकृतिक संसाधन है। पानी हमारे ग्रामीण और शहरी समुदायों के लिए स्वच्छता में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पानी एक महत्वपूर्ण आर्थिक संसाधन भी है। यह कृषि के सभी रूपों और अधिकांश औद्योगिक उत्पादन प्रक्रियाओं के लिए आवश्यक है। दुनिया भर में मीठे पानी के संसाधनों पर दबाव बढ़ रहा है[1]। पिछले कुछ दशकों से भारत में पानी की मांग में एक नाटकीय वृद्धि देखी गई है, जो जनसंख्या में वृद्धि, विशेषकर शहरी क्षेत्रों में, से शुरू हुई, जिससे खाद्य उत्पादन और घरेलू पानी की आपूर्ति की मांग में वृद्धि हुई है। औद्योगिक विकास के परिणामस्वरूप भी पानी की मांग बढ़ी है। सतही जल और भू-जल के दोहन के माध्यम से मांग को पूरा करने में कई गुना वृद्धि हुई है, नतीजतन, भू-जल संसाधन खत्म हो रहे हैं। कई शुष्क और अर्ध शुष्क क्षेत्रों में पानी के भू-जल स्तर में गिरावट और अच्छी गुणवत्ता के भूजल की उपलब्धता में गिरावट आई है। औद्योगिक अपशिष्टों और नगर निगम के कचरे से प्रदूषण के कारण मीठे पानी की आपूर्ति तेजी से खतरे में आ रही है।

भारत में जल से संबंधित समस्याएँ

आजादी के समय से ही भारत अनाज का उत्पादन बढ़ाने और सुरक्षित पेयजल आपूर्ति प्रदान करने की दोहरी चुनौती का सामना कर रहा है। सिंचाई विकास प्रारंभ की पंचवर्षीय योजनाओं की प्रमुख प्राथमिकता थी। जिससे सतह और भूजल संसाधनों के विकास के माध्यम से पानी की आपूर्ति में काफी उपलब्धियां अर्जित हुई हैं। परन्तु, इस विकास ने कई भौतिक, सामाजिक और प्रबंधन समस्याओं को भी जन्म दिया है।

मौजूदा आपूर्ति को बढ़ाने के अवसर

प्राकृतिक अपवाह के उपयोग का समग्र स्तर बहुत कम है और कई कारणों से इसका उपयोग बढ़ाने के अवसर बहुत ही सीमित हैं। सबसे पहले, लगभग सभी व्यवहार्य स्थान पहले से ही शोषित हैं और उनका उपयोग काफी गहन है[2]। बड़े बांधों के निर्माण ने बड़े पैमाने पर जलमग्नता तथा विस्थापन के साथ-साथ बड़े पैमाने पर मानव समुदायों को उनके पारंपरिक आजीविका स्रोतों और अवसरों से वंचित कर दिया गया है (डबलू.आर. आई[1])। मौलिक मानवाधिकार, स्वाभाविक न्याय और सामाजिक न्याय के मुद्दे, विस्थापन के विकास के ऐसे स्वरूप की तुलना में कहीं अधिक गंभीर हैं। अंतर्निहित सिद्धांत यह है कि विकास के फल प्राप्त करने वाले लोग वे नहीं हैं जो कीमत चुकाते हैं। भारत में बड़ी जल परियोजनाएं पर्यावरणविदों और सामाजिक न्याय कार्यकर्ताओं की समीक्षा के दायरे में आ रही हैं[3]। बड़े बाँधों से पर्यावरण और पारिस्थितिकी तंत्र को होने वाले खतरों को अच्छी तरह समझा जा सकता है। पारंपरिक ज्ञान से पता चलता है कि बड़े बांधों, जिसमें बड़े पैमाने पर जलमग्नता शामिल है, के गंभीर नकारात्मक पर्यावरणीय परिणाम हैं[4]।

वर्तमान आपूर्ति योजनाओं की घटती क्षमता

भारत में बड़ी जलाशय परियोजनाओं के सामने कई समस्याएं हैं, जिनसे वर्तमान आपूर्ति योजनाओं की क्षमता प्रभावित हो रही है। जलाशयों के जलग्रहण में त्वरित मृदा अपरदन और बाद के समय जलाशयों में गाद जमाव, जल विज्ञानियों के लिए एक गंभीर चिंता का विषय है। कई बार, मिट्टी के कटाव और गाद की वास्तविक दर, जलविज्ञानीय तरीकों के माध्यम से की गई गणना की तुलना में बहुत अधिक होती है। बड़े अतिक्रमण का कारण अक्सर नदी के बहाव क्षेत्र में प्रवाहित प्रवाह कम हो जाता है, जिसके परिणामस्वरूप अंतर्निहित जलीय जीवों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इन सभी कारकों का भविष्य की आपूर्ति पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। भारत के कई भागों में नहरों के पानी के कारण जल भराव, अत्यधिक रिसाव और लवणता की व्यापक समस्याओं के कारण भी समस्याएं आ रही हैं। लंबे समय तक जलभराव और लवणता के कारण कृषि भूमि की उत्पादकता में भारी गिरावट आती है और भूमि बंजर हो जाती है।

प्राकृतिक मीठे पानी की आपूर्ति

मानव कल्याण और आर्थिक विकास पर प्रत्यक्ष प्रभाव के कारण भारत जैसे देश में जल प्रदूषण विकास की सबसे गंभीर पर्यावरणीय समस्याओं में से एक है[1]। भारत में यह उदार आर्थिक नीतियों के माध्यम से औद्योगीकरण का परिणाम है। उद्योगों की उपस्थिति ने जल आपूर्ति की प्रभावी उपलब्धता को बहुत अधिक प्रभावित किया है। उद्योगों से श्रमिकों की मांग बढ़ती है और उनके साथ-साथ केंद्रित प्रवासी आबादी, नए शहरी केंद्र और मलिन बस्तियों का विकास होता है। उद्योगों में प्रवाह के रूप अपशिष्ट उत्पन्न होता है। केंद्रित आबादी भी घरेलू सीवेज के रूप में भारी मात्रा में अपशिष्ट उत्पन्न करती है। ज्यादातर, उद्योग अपने उपचारित, अनुपचारित या आंशिक रूप से उपचारित अपशिष्ट का निपटान प्राकृतिक जलधाराओं और नदियों में करते हैं, जिससे गंभीर प्रदूषण होता है, जो मीठे पानी की प्रभावी उपलब्धता को बहुत अधिक कम करता है। घरेलू और नगरपालिका अपशिष्ट भी बहती धाराओं में डाला जाता है। भारत में नदियों का प्रदूषण काफी व्यापक है। सेंट्रल बोर्ड फॉर प्रिवेंशन एंड कंट्रोल ऑफ़ वॉटर पॉल्यूशन द्वारा किए गए एक अध्ययन के अनुसार,

1979 की शुरुआत में ही, औद्योगिक अपशिष्टों और शहरी घरेलू कचरे के अंधाधुंध निपटान के कारण सभी 14 प्रमुख नदियों के बड़े हिस्से दूषित हो गए थे।

भू-जल विकास की समस्याएँ

भू-जल संसाधनों के अत्यधिक दोहन में योगदान देने वाले कई कारक हैं। पानी के दोहन की मात्रा पर कोई प्रतिबंध नहीं है। भू-जल के स्तर के कम होने और आर्थिक रूप से सुलभ संसाधन की कमी के सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय परिणाम अक्सर बहुत अधिक होते हैं। जैसे ही पानी का जलदायी स्तर नीचे जाता है, उथले कुएँ सूख जाते हैं और गरीब किसान अपने कुएँ छोड़ देते हैं। फिर, पहुंच केवल उन लोगों तक सीमित रहती है जो अपने कुओं को गहरा करने का जोखिम उठा सकते हैं। एक आर्थिक दृष्टिकोण से, पानी के स्तर के नीचे जाने से पानी की इकाई मात्रा को पंप करने के लिए आवश्यक ऊर्जा बढ़ जाती है और इसलिए निष्कर्षण की लागत बढ़ जाती है, जिससे, सिंचित कृषि की आर्थिक व्यवहार्यता कम हो जाती है। पर्यावरणीय दृष्टिकोण से, भू-जल एक सूखा प्रतिरोधक है। कम वर्षा और वर्षा नहीं होने के दौरान भू-जल के भंडारण का उपयोग फसलों की रक्षा, सूखे से बचाव, विभिन्न सामाजिक और पर्यावरणीय ज़रूरतों को पूरा करने के लिए किया जाता है। लंबे समय तक पानी की कमी से खाद्य सुरक्षा के लिए भी गंभीर खतरा पैदा हो सकता है और भारत की सूखे का प्रतिरोध करने की क्षमता गंभीर रूप से प्रभावित हो सकती है। भू-जल स्तर में निरंतर गिरावट से नदियों में स्थायी भू-जल योगदान कम हो सकता है, जिससे नदियों के प्रवाह और पारिस्थितिक तंत्र पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

भू-जल गुणवत्ता में गिरावट

भारत के कई हिस्सों में भूजल की गुणवत्ता में गिरावट देखी जा रही है। इसकी वजह से विभिन्न उपयोगों के लिए भू-जल की उपलब्धता में तेजी से कमी हो रही है। पानी के स्रोतों में खनिजों की उपस्थिति के कारण प्राकृतिक संदूषण पानी की गुणवत्ता की एक अंतर्निहित समस्या है। बढ़ती हुई मानव गतिविधियां भू-जल को सीधे दूषित करती हैं। जल निकायों में औद्योगिक और नगरपालिका के अपशिष्टों के अंधाधुंध निपटान के कारण भारत के कई शहरों और औद्योगिक समूहों में भू-जल का प्रदूषण एक प्रमुख चिंता का विषय है[5]। उन क्षेत्रों में जहां नदी और जलभृत को जलीय रूप से जोड़ा जाता है, वहां पर भू-जल, सतही जल निकायों के प्रदूषण के लिए अत्यधिक असुरक्षित है।

खेतों में रासायनिक उर्वरकों के गहन उपयोग और भूमि पर मानव और पशु अपशिष्ट के अंधाधुंध निपटान के परिणामस्वरूप अवशिष्ट नाइट्रेट और पोटेशियम के लीचिंग के कारण भू-जल में उच्च नाइट्रेट सांद्रता पैदा होती है। भारत के कई हिस्सों में भू-जल में नाइट्रेट की उच्च सांद्रता पाई गई है[6]। तटीय जलभृतों से भू-जल की अत्यधिक निकासी के कारण तटीय जलभृतों में समुद्री जल का अंतर्वेधन हुआ है, जिसने कई हजारों पीने के पानी और सिंचाई के कुओं को बेकार कर दिया गया है। गुजरात के कच्छ और सौराष्ट्र तथा चेन्नई तटीय क्षेत्र इसके उदाहरण हैं[8]।

भू-जल की बढ़ती मांग और भू-जल अल्पता

जनसांख्यिकीय और सामाजिक-आर्थिक रुझान की एक विस्तृत विविधता जैसे जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण, औद्योगिकीकरण, कृषि प्रथाओं में परिवर्तन और सांस्कृतिक परिवर्तन के संयोजन से पानी की मांग विस्फोटक रूप से बढ़नी शुरू हुई। आबादी और पानी की मांग के बीच संबंध गैर-रैखिक है। शहरी आबादी की पानी की मांग में वृद्धि, ग्रामीण आबादी की मांग की वृद्धि की तुलना में बहुत अधिक है। शहरी आबादी ग्रामीण आबादी की तुलना में बहुत तेजी से बढ़ रही है। संयुक्त राष्ट्र के आबादी के विभाजन के अनुमानों के मुताबिक, भारत की शहरी आबादी 2025 तक 60 करोड़ का आंकड़ा छू लेगी, जिससे यह देश की कुल आबादी का लगभग 45 प्रतिशत हो जाएगा[1]। शहरी आबादी में तेजी से वृद्धि के साथ, कुछ शहरों में आबादी एक ही स्थान पर एकाग्र हुई है तथा प्रति व्यक्ति पानी की मांग में बढ़ोतरी हुई। बढ़ती हुई जनसंख्या खाद्य अनाज की आपूर्ति पर हमेशा दबाव बनाती है। इसलिये, वर्तमान प्रति व्यक्ति आपूर्ति स्तर को बनाए रखने के लिए अधिक खाद्यान्न का उत्पादन करने की तत्काल आवश्यकता होगी। खाद्यान्न के साथ-साथ किसानों को बढ़ती सूक्ष्म आर्थिक जरूरतों को पूरा करने के लिए अन्य कृषि फसलों, विशेषकर नकदी फसलों के उत्पादन को बढ़ाना होगा। चूंकि शुद्ध खेती योग्य क्षेत्र में आगे विस्तार की कोई गुंजाइश नहीं है, इसलिए बढ़े हुए उत्पादन को खेती योग्य भूमि के इकाई क्षेत्र से उत्पादन बढ़ाकर पूरा करना होगा। यह केवल सिंचाई के तहत क्षेत्र के विस्तार के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है, जो वर्तमान में देश में सकल फसली क्षेत्र का लगभग एक तिहाई है, जिससे कृषि के लिए पानी की मांग में बढ़ोतरी होगी।

आर्थिक स्थिति और गरीबी दो महत्वपूर्ण मानदण्ड हैं जो संभावित रूप से प्राकृतिक संसाधनों के उपभोग करने के तरीके पर प्रभाव डालते हैं। आर्थिक वृद्धि पानी से संबंधित विभिन्न प्रकार की पर्यावरणीय सेवाओं की माँग को बढ़ाती है[9]। भारत ने

आर्थिक मोर्चे पर महत्वपूर्ण वृद्धि हासिल की है। उद्योग उन प्रतिस्पर्धी क्षेत्रों में से एक है जिनमें पिछले कुछ दशकों से पानी की मांग तेजी से बढ़ रही है। कृषि आधारित उद्योग, पेट्रोकैमिकल्स, उर्वरक, रिफाइनरी, और औद्योगिक रसायन जैसे पानी की अधिक खपत करने वाले उद्योगों के लिए पानी की आवश्यकता बढ़ रही है[10]। हालाँकि, औद्योगिक पानी की माँग आज भारत में पानी की कुल माँग का एक छोटा हिस्सा है, लेकिन आने वाले दशकों में इसमें भी तेजी से बढ़ोतरी की संभावना है। देश के कई शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में, औसत वार्षिक निष्कर्षण, औसत वार्षिक पुनर्भरण से कई गुना अधिक है। यह लाखों वर्षों से विकसित सुरक्षित भंडार को खर्च करने जैसा है, जिससे अंततः जलभृत् समाप्ति की ओर जाता है । यह संसाधन आधार की स्थिरता के लिए गंभीर खतरा है। अगर विकास के ऐसे ही तरीके जारी रहे, तो हम तेजी से ऐसी स्थिति में पहुंचेंगे, जहां इन क्षेत्रों में पूरा भू-जल संसाधन समाप्त हो जाएगा।

सतही जल

सतही प्रदूषण जल निकायों से प्राकृतिक मीठे पानी की आपूर्ति के लिए एक बड़ा खतरा है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की रिपोर्ट में देश की कुछ सबसे महत्वपूर्ण नदियों के किनारों पर 20 गंभीर रूप से प्रदूषित क्षेत्रों का उल्लेख किया गया है जहाँ प्रदूषण का स्तर बहुत ऊपर है, जिसे प्रवाह आत्मसात नहीं कर सकता है[11]। ये क्षेत्र देश के कुछ उभरते औद्योगिक समूहों और प्रमुख शहरों के आस-पास हैं। भारत में प्रतिवर्ष उत्पन्न होने वाले अपशिष्टों का लगभग 90 प्रतिशत हिस्सा नगर निगम का है। कई प्रमुख भारतीय शहरों और कस्बों में नगरपालिका के सीवेज और औद्योगिक कचरे के उपचार के लिए पर्याप्त सुविधाओं का अभाव है। जिसके कारण सतही जल में प्रदूषण बढ़ रहा है। देश में कई छोटे और बड़े जलाशयों की भंडारण क्षमता और जीवन तेजी से कम हो रहा है, जिसके कारण देश के कई बड़े शहरों और कस्बों की पानी की आपूर्ति के मौजूदा स्तर को भविष्य में बनाये रखने में काफी समस्याएं आ सकती हैं क्योंकि इनकी जल आपूर्ति इन जलाशयों पर बहुत अधिक निर्भर करती है। पानी की कम उपलब्धता के कारण उत्पन्न समस्या, शहरी क्षेत्रों में तेजी से होने वाली जनसंख्या वृद्धि से और जटिल हो जाती है, जिसके परिणामस्वरूप प्रति व्यक्ति आपूर्ति स्तर कम हो जाता है, जिससे प्रति व्यक्ति आपूर्ति आवश्यकताओं और आपूर्ति स्तरों के बीच अंतर बढ़ जाता है।

बढ़ती प्रतिस्पर्धा और बढ़ते संघर्ष

जल प्रबंधन क्षेत्र में आज भारत के सामने एक बड़ी चुनौती है, मांग क्षेत्रों के बीच बढ़ती प्रतिस्पर्धा[13]। आजादी के बाद से सभी क्षेत्रों में पानी की मांग बढ़ी है। हालांकि, औद्योगिक उपयोग और शहरी घरेलू उपयोग जैसे क्षेत्रों में इस मांग में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। राष्ट्रीय स्तर पर अभी भी सिंचाई का जल उपयोग मांग में सबसे अधिक हिस्सा है। परन्तु, विभिन्न मांगों और उपयोगों के कारण यह स्वरूप बादल रहा है। इसके अलावा, भौगोलिक स्थानों के अनुसार, शहरी आबादी में अतिवृद्धि, मौजूदा शहरी आबादी की एक ही स्थान पर अधिक एकाग्रता और औद्योगिक क्षेत्रों के फैलाव के कारण, स्वरूप में असमान परिवर्तन हो रहे हैं। शहरी क्षेत्रों में आबादी का भारी संकेंद्रण नगरपालिका की जल आपूर्ति आवश्यकताओं में अत्यधिक वृद्धि पैदा करता है। यह अच्छी गुणवत्ता और उच्च प्राथमिकता दोनों के लिए ही अच्छा का नहीं है। जब शहरी क्षेत्रों के लिए अपनी आवश्यक आपूर्ति का प्रबंधन करना मुश्किल हो जाता है, तब, वे अक्सर ग्रामीण क्षेत्रों के संसाधनों पर दावा करना शुरू कर देते हैं, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों के साथ प्रतिस्पर्धी मांग के लिए संघर्ष प्रारंभ हो जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योगों का फैलाव एक ऐसी स्थिति की ओर ले जाता है, जहां उन क्षेत्रों में पानी की समग्र मांग तेजी से बढ़ती है, जिसके परिणामस्वरूप उद्योग पानी की आपूर्ति के लिए सिंचाई और पीने के पानी के साथ प्रतिस्पर्धा करने लगते हैं।

भारत में जल प्रबंधन की योजनाएँ

भारत को जल संसाधनों में दोहरी समस्या का सामना करना पड़ रहा है। पहली समस्या है, घटती प्राकृतिक आपूर्ति और पीने, उद्योगों और खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाने के लिए बढ़ती माँग, तथा पारिस्थिति की तंत्र प्रबंधन के लिए ताजे पानी की कमी[14]। दूसरी समस्या है, पानी के बंटवारे को लेकर बढ़ता टकराव। जल प्रबंधन की जरूरतों को संबोधित करने के लिए मांग और आपूर्ति के बीच संतुलन बनाए रखना और संघर्षों को हल करने के लिए क्षेत्रों में पानी का समान आवंटन दोहरी चुनौती है। इसे पूरा करने के लिए आर्थिक और पर्यावरणीय उद्देश्य से जल प्रबंधन रणनीतियों को विकसित करना, सामाजिक श्रेणियों के अनुसार जल आपूर्ति पर वैज्ञानिक आंकड़ा आधार तैयार करना गंभीर चुनौती है। जल प्रबंधन के लिए ऐसी तकनीकें विकसित करने की आवश्यकता है जो सामाजिक और आर्थिक रूप से व्यवहार्य हों।

वैज्ञानिक आंकड़ा आधार की उपलब्धता

देश में जल प्रबंधन क्षेत्र के सामने सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक है, पानी के बजट आवंटन की योजना और जल प्रबंधन निर्णय लेने के लिए आवश्यक पर्याप्त वैज्ञानिक आंकड़ों की अनुपलब्धता। पानी की आपूर्ति और मांग का विश्वसनीय अनुमान, जल प्रबंधन के लिए मुख्य जरूरतों में से एक है। जल आपूर्ति के

दो प्रमुख घटक हैं : सतही जल और भू-जल। भू-जल आपूर्ति की गणना औसत वार्षिक पुनर्भरण के आधार पर निर्धारित की जाती है। पुनर्भरण अनुमान के लिए अपनाई गई कार्यप्रणाली का वैज्ञानिक आधार कमजोर है और इसलिए अनुमान संदिग्ध हैं। पुनर्भरण के अनुमान के लिए इस्तेमाल किये जाने वाले ''जल स्तर में उतार-चढ़ाव दृष्टिकोण" की कई अंतर्निहित सीमाएँ हैं। उचित स्तर की विश्वसनीयता के साथ पुनर्भरण का अनुमान लगाने में भी समस्याएं हैं। जहाँ तक सतही जल का संबंध है, सबसे महत्वपूर्ण आंकड़ा भरोसेमंद अपवाह है। वैज्ञानिकों के लिए भरोसेमंद अपवाह का अनुमान लगाने के लिए आवश्यक ऐतिहासिक वर्षा और प्रवाह के आंकड़े पर्याप्त मात्रा और पर्याप्त समय अवधि के लिए उपलब्ध नहीं हैं। भारत में अधिक समय के लिए अपवाह और अच्छी संख्या में वर्षा के आंकड़े केवल कुछ प्रमुख नदी घाटियों के लिए ही उपलब्ध हैं। बाकी के लिए, आंकड़े सीमित संख्या में और थोड़े समय के लिए ही उपलब्ध हैं। ऐसे बेसिनों के लिए, ''भरोसेमंद प्रवाह" पर आंकड़े, ऐतिहासिक आंकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण के माध्यम से उत्पन्न करने पड़ते हैं, जो कम विश्वसनीय होते हैं। गुणवत्ता एक और महत्वपूर्ण चर है जो एक उद्देश्य विशेष के लिए पानी की उपयुक्तता को निर्धारित करता है और इसलिए मात्रा और गुणवत्ता के मुद्दे परस्पर जुड़े हुए हैं[15]। कई जैविक, भौतिक और रासायनिक मानदण्ड हैं जो पानी की गुणवत्ता निर्धारित करते हैं। देश में मात्र कुछ ही अवलोकन केंद्र हैं जो पानी की गुणवत्ता के लिए सभी आवश्यक मापदंडों का मापन करते हैं और इसलिए प्राप्त आंकड़े पानी की गुणवत्ता की वास्तविक स्थिति पर निर्णायक नहीं हैं। इसलिए, भारत जैसे देश में जहां पानी पर शोध अभी भी उन्नत नहीं है, पानी की गुणवत्ता पर उपलब्ध आंकड़े कम विश्वसनीय हैं और पानी की गुणवत्ता प्रबंधन के लिए मौजूदा कार्यप्रणाली की पहचान करने के लिए अपर्याप्त हैं।

आपूर्ति केंद्र-बिंदु

20वीं शताब्दी के दौरान की गई वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति ने पानी की आपूर्ति और अंतर्निहित प्राकृतिक प्रणालियों को समझने, इसे नियंत्रित करने और दोहन करने की क्षमता बढ़ाने में सफलता पाई है। बांध निर्माण, गहरी छेदन क्षमता और पंपिंग तकनीक आदि ने जल संसाधन दोहन को प्रायः टिकाऊ वहन क्षमता की सीमा से परे प्रोत्साहित किया है[16]। अब तक जल प्रबंधन को एक इंजीनियरिंग गतिविधि के रूप में देखा गया था जिसमें भवन निर्माण, बड़े बांध और डायवर्सन हेड, भंडारण जलाशयों और परिवहन प्रणालियों का निर्माण शामिल था तथा जिसमें वार्षिक वर्षा में स्थानिक और सामयिक विविधताओं का ध्यान में रखा जाता था। जल क्षेत्र के संसथान बड़े पैमाने पर तकनीकी उन्मुख थे तथा जल क्षेत्र में आपूर्ति पर बहुत ध्यान देने से ये संस्थान काफी समय तक तकनीकी उन्मुख रहे। समय के साथ तेजी से कम होते जा रहे संसाधनों को नई जल विकास परियोजनाएँ शायद ही कोई अतिरिक्त आपूर्ति प्रदान करती हैं, वे केवल उपलब्ध आपूर्ति को वैकल्पिक उपयोगों के बीच को आवंटित करती हैं। इस प्रकार, इन संस्थानों की प्राथमिकताएं आपूर्ति प्रबंधन से संरक्षण, मांग और आवंटन प्रबंधन में बदल रही हैं। कई ऐसे आर्थिक साधन हैं जो जल के सामाजिक उपयोग की मांग को संभावित रूप से कम कर सकते हैं या दूसरे शब्द में पानी के कुशल उपयोग और प्रदूषण कम करने के लिए प्रतिस्पर्धी प्रोत्साहन बना सकते हैं[9]।

तकनीकी चुनौतियां

भारत में जल संरक्षण और प्रबंधन प्रौद्योगिकियों में की गई प्रगति की तुलना में पानी की समस्याएं बहुत तेजी से बढ़ी हैं। सबसे पहले, भौतिक समस्याओं की समझ बहुत ही सीमित है। प्रबंधन सूचना प्रणालियों का उपयोग जो समस्याओं को समझने और प्रबंधन निर्णयों को विकसित करने में मदद कर सकता है, भारत में अत्यंत सीमित है। इससे जुड़ी समस्याएं हैं- व्यवस्थित और वैज्ञानिक आंकड़ा संग्रह का नहीं होना, संकलन, प्रसंस्करण और पुनर्प्राप्ति प्रणाली की अनुपस्थिति, सूचनाओं की अत्यधिक अलग-अलग प्रकृति, और मौजूदा जानकारी तक पहुंच का नहीं होना। जल प्रबंधन के तकनीकी विकल्प आपूर्ति बढ़ाने के लिए संरचनात्मक हस्तक्षेपों तक सीमित है। कमी के दौरान, आमतौर पर नए स्रोतों के निर्माण पर ध्यान केंद्रित किया जाता है। जल प्रबंधन के क्षेत्र में अंतिम उपयोग संरक्षण, पुनर्चक्रण और पुनः उपयोग की अवधारणा भारत के लिए नई हैं तथा जटिल जल संसाधन समस्याओं का सामना करने के लिए तकनीकी समाधान अनुपस्थित हैं।

निष्कर्ष

आजादी के बाद से, भारत ने जल क्षेत्र में उल्लेखनीय उपलब्धियां हासिल की हैं, जो कि सिंचित कृषि में बड़ी वृद्धि, कृषि उत्पादन में वृद्धि और ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में पेयजल आपूर्ति में प्रगति से स्पष्ट है। ऐसा करते समय, भू-जल की कमी, भू-जल की गुणवत्ता में गिरावट, घटती आपूर्ति और सतही जल के बढ़ते प्रदूषण के कारण कई क्षेत्रों में जल संसाधनों का विकास भौतिक स्थिरता की सीमा को पार कर गया है। जनसंख्या वृद्धि और सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनों के कारण सभी क्षेत्रों में पानी की मांग में वृद्धि होती है, जिससे जल संकट की समस्या पैदा हो

जाती है। पानी की कमी बढ़ती जनसंख्या, आर्थिक विकास, और सामाजिक और पर्यावरणीय लक्ष्यों की सुरक्षा के लिए खाद्य उत्पादन बढ़ाने में बड़ी बाधाएं डालती है। इसके साथ, बढ़ती प्रतिस्पर्धा और सिकुड़ते संसाधन के बंटवारे पर संघर्ष के परिणामस्वरूप जल की कमी सामाजिक सुरक्षा और पारिस्थितिक तंत्र की सुरक्षा के लिए एक प्रमुख स्रोत के रूप में उभरी है। आज भारत जिन जल प्रबंधन चुनौतियों का सामना कर रहा है, वे वास्तव में बहुत बड़ी हैं। सबसे पहले, भौतिक समस्याओं और प्रबंधन समाधान की हमारी समझ के बीच एक चौड़ा अंतराल मौजूद हैं। प्रबंधन समाधान जो तकनीकी और आर्थिक रूप से संभव हो और सामाजिक और राजनीतिक रूप से व्यवहार्य हो उपलब्ध नहीं हैं। इसके अतिरिक्त, सरकार की नीतियों और कार्यक्रमों को प्रबंधन के बजाय जल संसाधनों को विकसित करने के लिए तैयार किया गया है। विभिन्न क्षेत्रों में पानी की मांग, पानी की उपलब्धता और गुणवत्ता के बारे में पर्याप्त वैज्ञानिक जानकारी नहीं होने के कारण समस्याओं के स्थायी प्रबंधन की रणनीतियों को विकसित करने में बाधा आई है। आंकड़ा संग्रह, प्रसंस्करण और पुर्नप्राप्ति के लिए एजेंसियों के बीच समन्वय की कमी और संसाधन के आकलन में सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय कारकों के एकीकरण की कमी भी समस्या का मूल कारण है। प्रौद्योगिकी एक और बड़ी चुनौती है। जल संरक्षण और प्रबंधन के लिए उपलब्ध तकनीक सीमित और कम लोकप्रिय हैं। तकनीकी रूप से व्यवहार्य, आर्थिक रूप से व्यवहार्य, पर्यावरण और पारिस्थितिक रूप से मजबूत और जल प्रबंधन में सामाजिक रूप से स्वीकार्य समाधान विकसित करने के उद्देश्य से जल प्रौद्योगिकी में उन्नति नहीं हो रही है।

जल क्षेत्र में मौजूदा संस्थान तकनीकी रूप से उन्मुख, क्षेत्रीय और केंद्रीकृत हैं, जिनका प्रमुख उद्देश्य मांग की आपूर्ति करना है। वे सामाजिक समस्याओं को हल करने के लिए अलग-अलग दृष्टिकोण को अपनाते हैं और उनमें क्षेत्रीय जल समस्याओं को हल करने और प्रदूषण को नियंत्रित करने की क्षमताओं का अभाव है। संस्थायें, संस्थागत क्षमताओं की कमी और खराब संगठनात्मक समन्वय के कारण, विभिन्न हितधारकों की परस्पर विरोधी जरूरतों को पूरा करने में विफल रहती हैं। भू-जल के अति दोहन, सतही जल प्रदूषण, और मौजूदा सतही जलाशयों की क्षमता में कमी, पानी की कमी के कारण उपजी समस्याएं आदि आने वाले समय में और बढेंगी। पानी भविष्य में प्रबंधित होने वाला सबसे मुश्किल पदार्थ है। इसीलिए इस विषय पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। स्थायी जल प्रबंधन के लिए एक सार्थक दृष्टिकोण की आवश्यकता है और इसके तरीके और साधन खोजने होंगे।

संदर्भ

1. वर्ल्ड रिसोर्सेज इंस्टीट्यूट, ''वर्ल्ड रिसोर्सेज 1994-95ः पीपल एंड दी एनवायरॉन्मेंट'', रिपोर्ट प्रीपेर्ड बाय वाटर रिसोर्सेज इंस्टीट्यूट इन कोलैबोरेशन विद यूनाइटेड नेशन्स एन्वायरॉन्मेंट प्रोग्राम एंड यूनाइटेड नेशनस डिवेलपमेंट प्रोग्राम. बॉम्बेः ऑक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, (1995)।
2. कुमार एम डी, ''टेक्निक्स ऑफ़ फारमर्स अवेयरनेस ऑफ़ वाटर कंजेरवेसन : प्रोब्लेम्स एंड सॉल्यूशन्स'', पेपर प्रेजेंटेडएट द नेशनल वर्कशॉप/सेमिनारऑन वाटर कंजेरवेशन एंड फारमर्स अवेयरनैस, रुड़की, 24-25 सितंबर, (1992)।
3. परांजपे एस. एवं जॉय के जे, ''सस्टेनेबल टेक्नोलॉजी मेकिंग सरदार सरोवर प्रोजेक्ट विअबले : ए कॉम्प्रेहेंसिव प्रपोजल टू मॉडिफाई द प्रोजेक्ट फॉर ग्रेटर इक्विटी एंड इकोलॉजिकल सस्टेनेबलिटी'' अहमदाबादः एन्वायरॉन्मेंट एंड डिवेलपमेंट सीरीज, सेंटर फॉर एन्वायरॉनमेंट एजुकेशन, (1995)।
4. काय, मेल्विन एट अल., ''वाटर : इकोनॉमी, मैनेजमेंट एंड डिमांड'' लंदनः ई एंड एफ.एनस्पों., (1997)।
5. किट्टू एन, ''स्टेटस ऑफ़ ग्राउंड वाटर डिवेलपमेंट एंड इट्स इम्पैक्ट ऑन ग्राउंडवाटर क्वालिटी', इन एम. मोइंच (एडी.) ग्राउंड वाटर अवेलेबिलिटी एंड पोल्लुशनः द ग्रोइंग डिबेट ओवर रिसोर्सेस कंडीशन इन इंडिया. मोनोग्राफ.वी.आई.के. एस.ए.टी. नेचुरल हेरिटेज इंस्टीट्यूट, वी.आई.के.एस.ए.टी, अहमदाबाद, (1995)।
6. मोइन्च एम एवं मेट्ज़गेर एच, ''ग्राउंडवाटर अवेलेबिलिटी फॉर ड्रिंकिंग वाटर इन गुजरात : क्वालिटी, क्वांटिटी एंड हेल्थ डायमेंशन्स'' मोनोग्राफ, वी.आई.के.एस.ए.टी-पेसिफ़िक इंस्टीट्यूट फॉर स्टडीज इन एन्वायरॉन्मेंट, डिवेलपमेंट एंड सिक्यूरिटी वी.आई.के.एस.ए.टी, अहमदाबाद, (1992)।
7. भाटिया बी, ''लश फील्ड्स एंड पार्च्ड थ्रोट्सः पॉलिटिकल इकोनॉमी ऑफ़ ग्राउंड वॉटर इन गुजरात'', इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, XXVII (51-52): ए 12. 170, (1992)।
8. कुमार एम डी, ''डायनैमिक ऑफ़ ड्रिंकिंग वाटर इन रूरल गुजरातः फिजिकल, सोशल एंड इंस्टिट्यूशनल डायमेंशन्स'', पेपर प्रेजेंटेड इन द वर्कशॉप ऑन ड्रिंकिंग वाटर प्रॉब्लम्स इन

रूरल गुजरातः इश्यूज एंड पर्सपेक्टिव्स, जी.आई.डी.आर, 25 जनवरी, (1995)।

9. पीयर्स डी डब्ल्यू एवं वॉर्डफोर्ड जे, ''वर्ल्ड विदाउट एंडः इकोनॉमिक्स, एन्वायरॉन्मेंट, एंड सस्टेनेबल डिवेलपमेंट'' न्यूयॉर्क, ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, (1993)।
10. टी.इ.आर.आई, ''लुकिंग बैक टू थिंक एहेड ग्रोथ विद रिसोर्स एन्हांसमेंट ऑफ एन्वायरॉन्मेंट एंड नेचर'' न्यू डेल्हीः टाटा एनर्जी रिसर्च इंस्टीट्यूट, (1998)।
11. डी के बिश्वास, एवं शर्मा मीता, ''स्टेटस ऑफ़ ग्राउंड वाटर डिवेलपमेंट एंड इट्स इम्पैक्ट ऑन ग्राउंड वाटर क्वालिटी-एन अप्रैज़ल'' इनएम. मोइंच (एडी.) ग्राउंड वाटर अवेलेबिलिटी एंड पॉल्यूशनः द ग्रोइंग डिबेट ओवर रिसोर्सेस कंडीशन इन इंडिया. मोनोग्राफ. वी.आई.के.एस.ए.टी. नेचुरल हेरिटेज इंस्टीट्यूट, वी.आई.के.एस.ए.टी, अहमदाबाद, (1995)।
12. वर्ल्ड बैंक, ''इंटर-सेक्टरल वाटर एलोकेशन प्लानिंग एंड मैनेजमेंट'' वर्ल्ड बैंक-गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया, इंडिया वाटर रिसोर्सेज मैनेजमेंट सेक्टर रिव्यू, वॉल्यूम-मेन रिपोर्ट, न्यू डेल्ही, (1998)।
13. बल्लभ वी एवं सिंह कटार, ''कम्पेटिंग डिमांडस ऑफ़ वाटर इन साबरमती बेसिनः पोटेंशिअल एंड फ्यूचर कांलिट्स'', पेपर प्रेजेन्टेड एट द आई.सी.आई.पी.डी कांफ्रेंस ऑन वाटर, एम्स्टर्डम, नीदरलैंड, 11-17 अक्तूबर, (1997)।
14. बल्लभ वी ए एम, कुमार दिनेश एवं जयेश तलाटी, ''फ़ूड सिक्योरिटी एंड वाटर मैनेजमेंटः इंस्टीट्यूशनल चेलेन्जेज फॉर अर्ली 21 सेंचुरी'', पेपर प्रेजेन्टेड एट द नेशनल सिम्पोजियम ऑन बिल्डिंग एंड मैनेजिंग ऑर्गेनाइजेशन्स फॉर रूरल डिवेलपमेंट इन द न्यू मिलेनियम, इंस्टिट्यूट ऑफ़ रूरल मैनेजमेंट, आनंद, 13-14 दिसंबर, (1999)।
15. बिस्वास ए के, ''रिवर वाटर क्वालिटी मॉनीटरिंग इन डिवेलपिंग कंट्रीज'' इन ऐली एम.शेडी (एडी.) मैनेजमेंट एंड डिवेलपमेंट ऑफ़ मेजर रिवर्स. वाटर रिसोर्सेस मैनेजमेंट सीरीज-3. कलकत्ताः ऑक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, (1996)।
16. फ्रेडरिक के डी, 'बैलेंसिंग वाटर डिमांड विद सप्लाईः द रोल ऑफ़ मैनेजमेंट इन, वर्ल्ड ऑफ़ इन्क्रीजिंग सकार्सिटी'', टेक्निकल पेपर 189, वाशिंगटन डीसीः वर्ल्ड बैंक, (1993)।